गुरुवाणी

जिनके पास साधन नहीं हैं, वे ऐसा नहीं कि जीवन में कुछ नहीं कर पाते है। वे भी सब कुछ प्राप्त करते है। बस यही है कि उन्हें प्रयत्न थोड़ा अधिक करना होता है। आप प्रयत्न करते रहें बिना किसी संशय के। वह महाप्रभु सब कुछ उपलब्ध करायेंगे।

–पीठाधीश्वर बाबा सिद्धार्थ गौतम राम जी

अघोरेश्वर निनाद

अघोरान्ना परो मंत्रो। नास्ति तत्वम् गुरोः परम्।।

R.N.I.UPHIN-2000/3008 Postal No. VSI-E-01/2013-2015

वर्ष-१५, अंक ११, वाराणसी। सोमवार १५ जून २०१५ ई० सहयोग राशि ४.२५

क्रिया

हिन्दी व्याकरण में ''क्रिया'' शब्द का भाव कर्ता के द्वारा कार्य के किये जाने या करने से लगाया जाता है। कार्य का अर्थ होता है, स्थिति में परिवर्तन। भौतिक विज्ञान में भी क्रिया या कार्य की परिभाषा का अभिप्राय लगाये जाने से निर्दिष्ट वस्तु के स्थान परिवर्तन से ही होता है। उदाहरणस्वरूप यदि स्टेशन पर कोई कुली सिर पर सामान रखकर गाड़ी की प्रतीक्षा में खड़ा है, तो उसके परिश्रम को सम्पन्न क्रिया की श्रेणी में नहीं रखा जाता है यद्यपि क्रिया की प्रक्रिया जारी है परन्तु अंजाम या परिणामपरक प्रयास को ही क्रिया कहा जाता है। जिससे स्थिति में गुणात्मक, धनात्मक परिवर्तन दृष्टिगोचर होता है, वही क्रिया या कार्य कहा जाता है। शब्द, क्रिया का प्रभाव बड़ा ही व्यापक है, यह न केवल शारीरिक अथवा मानसिक होती है, अवचेतन स्थिति में भी मन के द्वारा खोजे गये या प्राप्त किये गये विभिन्न अवयवों से व्यक्त होती है। यह हर प्राणी में ऐच्छिक एवं एनेच्छिक दोनों ही प्रकार से होती है, ऐच्छिक क्रिया पर प्राणी के मन मस्तिष्क का नियंत्रण होता है, वह उसकी इच्छाशक्ति के प्रभाव से अंग-प्रत्यंग द्वारा कार्य लिया जाना, अध्ययन, मनन, चिन्तन करना लिखना पढ़ना आदि आदि। जबकि एनेच्छिक क्रिया प्रकृति प्रदत्त होती है, जैसे शरीर में रक्त संचरण, श्वास का लेना-छोड़ना, स्वप्न लोक में विचरण करना, हृदय का धड़कना आदि आदि। क्रिया या कृत कार्य का सम्बन्ध व्यक्ति के समष्टि से होता है जैसे एक-एक ईंट से इमारत बनायी जाती है ठीक उसी तरह हमारे जीवन में व्यक्ति द्वारा किये गये एक एक कार्य उसके व्यक्तित्व के सहभागी बनते है। कहा जाता है कि शान्ति के लिये क्रान्ति आवश्यक है यानी किसी भी सुखद परिणाम को पाने की अभीष्ट इच्छा हमें कार्य करने को बाध्य करती है, मात्र पुस्तक पढ़कर भी यदि कोई वैज्ञानिक अथवा अभियंता उसे कार्य रूप में परिणित न करें, समाज में व्यवहारिक धरातल पर उसे सिद्ध न करें तो वह निरर्थक होता है, इसी प्रकार ज्ञान एवं कर्म के जुड़े होने से ही आशाजनक परिणाम प्राप्त होते हैं। जिसमें अभ्यास एवं निरन्तरता का बड़ा महत्व है। कहा जाता है कि ''बूँद बूँद से तालाब भरता है'' तथा ''करत करत अभ्यास के जड़मति होत सुजान'' यानी निरन्तर अभ्यास करते रहने, लगे रहने से जो असाध्य है, कठिन है, वह भी सरल, सुगम एवं जाग्रत, हृदयग्राही हो जाता है, जो सफलता के रूप में कार्य, क्रिया करने के परिणामस्वरूप हमें प्राप्त होता है। जैसे एक विद्यार्थी जितनी प्रसन्नता, तन्मयता से पढ़ाई में जी लगाता है, उसे उसी अनुपात में सफलता भी प्राप्त होती है, यही स्थिति जीवन के हर क्षेत्र में लागू होती है, चाहे वह खेल जगत हो, व्यापार जगत हो, विज्ञान जगत हो या अध्यापन जगत हो, जिससे व्यक्ति के अन्दर शक्ति का प्रस्फुटन होता है, उसमें उत्साह का संचार होता जाता है, जिससे वह उत्तरोत्तर विकास के पथ पर अग्रसर होता चला जाता है।

प्रत्येक मनुष्य में क्रिया का श्रीगणेश उसके नित्य कर्म से ही प्रारम्भ हो जाता है, यदि वह ब्रह्ममुर्हूत में शैय्या छोड़ता है, प्रात: प्राकृतिक क्रिया में निमग्न होता है, जैसा कि परम पूज्य अवधूत भगवान राम जी के द्वारा ''सफल योनी'' नामक ग्रन्थ में सर्वेश्वरी के अनुयायियों द्वारा प्रात: क्रिया का प्रतिपादन, गुरु स्मरण एवं हाथों की हथेलियों को समक्ष रखकर लक्ष्मी, सरस्वती तथा परब्रह्म परमेश्वर की आराधना की जानी बतायी गयी है, जिससे व्यक्ति का जीवन सुखमय एवं शान्तिप्रद व्यतीत होता है, इसी प्रकार पृथ्वी माता को भी प्रात:काल पैर रखने से पूर्व प्रणाम किये जाने की परम्परा का पालन करना स्वधर्म कहा गया है। मात्र इन छोटी-छोटी प्रारम्भिक क्रियाओं से ही हमारा दिन भर संवर जाता है, हम अपनी अज्ञात कमजोरियों जो परोक्ष रूप से चौबीस घंटे में कई बार ईर्ष्या, द्वेष, अहंकार आदि के रूप में घात-प्रतिघात करने की जुगत में रहती हैं, अपने आप रक्षा हो जाती है। व्यक्ति सामान्य, साधारण बना रहता है, जो असाधारण व्यक्ति का पहला लक्षण होता है, जैसे गोस्वामी तुलसीदास जी ने हनुमान चालीसा के प्रारम्भ में ही **''बुद्धिहीन तनु जानि कै सुमिरौ पवन कुमार, बल-बुद्धि विद्या देहू मोहिं हरहु कलेश विकार''** की याचना करते हैं, यानी शुद्ध, सरल, निर्विकार चित्त से तन-मन की पवित्रता तथा शुद्धि के लिये प्रात:काल की प्रार्थना अवश्यमेव फलदायी होती है। यही क्रियायें हमारे दिन भर के कृत कार्य की बुनियाद होती है, ऐसे ही वातावरण में हम अपने शरीर से नाना प्रकार के कृत्यों को करके आशानुकूल पद की प्राप्ति करने में नि:संदेह सफल हो जाते हैं। इसीलिये प्रात:काल स्नानादि के उपरान्त अघोर वचन शास्त्र के ''क्रिया'' शीर्षक अध्याय में आचमनी के साथ, आसन पर बैठने, भावना करने का सरल विधान बताया गया है ताकि मनुष्य अंदर से सबल होकर, निर्भय होकर अपने कर्त्तव्य पथ पर आरूढ़ रहे। चित्त को निर्मल बनाने हेतु, क्रिया या कर्म में निखार लाने हेतु अपने इष्ट या गुरु को ध्यान में रखकर ध्यान करने की प्रक्रिया का विवरण अंकित किया गया है ताकि आपकी क्रियायें शत प्रतिशत फलदायी बनी रहे यानी तन तथा मन दोनों को ही पुष्टाहार देने के पूर्व परिष्कृत किया जाता है। व्यक्ति को सद्कर्म हेतु सक्षम एवं समर्थ बनाने की ही प्रक्रिया का नाम, जप, प्रणव या प्राणायाम है।

इसी आशय से युग युग से हमारे सनातन धर्म में मठों, मन्दिरों, स्थलों में जाकर श्रद्धाभाव से सिर नवाकर दर्शन-पूजा की अवधारणा को अक्षुण्ण बनाया गया है। गुरु के दर्शन कर उनकी वाणी के श्रवण से हमें अप्रतिम लाभ प्राप्त होता है, कहा जाता है कि मात्र सुनने अथवा पढ़ने से मात्र सत्तर फिसदी तथ्यों को मस्तिष्क धारण करता है तथा शेष ३० फीसदी निरर्थक चला जाता है, जबकि वक्ता को साक्षात् देखकर, उनकी भाव मुद्रा के साथ श्रवण करने से तथा उस पर मनन करने से लगभग शत प्रतिशत तथ्यों को हम अंगीकार कर सकते हैं, उन्हें अपना सकते हैं अन्यथा बच्चों को केवल पुस्तकों की सी०डी० प्रदान कर दी जाती, उन्हें विद्यालय अथवा विश्वविद्यालय जाने की आवश्यकता ही नहीं पड़ती लेकिन विषय विशेष के गुरु द्वारा साक्षात् उनकी उपस्थिति में अर्जित ज्ञान बड़ा ही स्थायी, दृढ़ एवं हृदयग्राही होता है। उसी प्रकार सद्गुरु के मात्र दर्शन से ही, उनके प्रभामण्डल की रश्मियाँ हमारे विकारों को दूर कर हमें शीतलता प्रदान करती है, जिसका अनुभव प्रत्येक व्यक्ति स्वयं के अनुभूति द्वारा ही कर सकता है।

क्रियाशीलता का विलोम निष्क्रियता है, जिसका पर्यायवाची आलस्यता भी है।

शेष पृष्ठ दो पर

विश्वयोग दिवस

योग भारतवर्ष की पुरानी ऋषि परम्परा की थाती रही है। जिससे शारीरिक, मानसिक, अध्यात्मिक विकास के साथ ही साथ जन कल्याण एवं स्वस्थ समाज का सृजन होता है। ऋषि पातंजलि के द्वारा योग के पाँच रूप बताये गये है। जो ज्ञानयोग, राजयोग, हठयोग, मंत्र योग एवं जप योग है तथा योग से प्राप्त की गई अनुभूतियों को शब्दों में व्यक्त करना संभव नहीं है।

यह बड़े ही सौभाग्य की बात है कि राष्ट्र संघ की महासभा में विगत सितम्बर २०१४ में हमारे राष्ट्र भारत के प्रधानमंत्री के पहले पर अन्तर्राष्ट्रीय योग दिवस के रूप में २१ जून को हर वर्ग मनाने का उद्घोष किया गया है। सरल भाषा में शब्द योग का शाब्दिक अर्थ जोड़ने से होता है यानी शरीर संचालन के अवयवों में एक समरूपता, तादात्मय स्थापित होना। योग का अर्थ मात्र आसान प्राणायाम जैसी क्रियाओं तक ही सीमित नहीं है बल्कि जैसा कि गीता में विशद विवेचना के अनुसार कर्मयोग, ज्ञानयोग एवं सांख्ययोग में समष्टि समाहित हो जाती है। वैसे तो प्राचीन काल में भी भारत को विश्वगुरु का दर्जा प्राप्त था, परन्तु आधुनिक काल में यदि राष्ट्र संघ द्वारा समस्त विश्व के १९४ सदस्यों में से १७२ ने योग के महत्व को दृष्टिगत रखते हुए इसे एक मिशन के रूप में मनाने का निश्चय किया है, समर्थन किया है तो विश्व मानवता के प्रति यह सचमुच एक अद्भुत मिशाल है।

जैसे प्रत्येक जीव की आत्मा का स्वरूप एक जैसा है, ठीक उसी प्रकार योग का किसी धर्म, सम्प्रदाय अथवा पंथ विशेष से ही लगाव या जुड़ाव सिद्ध करना उसे सीमित दायरे के सोच के सदृश्य है। योग से विश्व के प्रत्येक मानव न केवल सचेतनता पायेगा बल्कि वह स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मन का स्वामी बना रहेगा। इससे सामूहिक रूप से जनमानस के अन्तर्मन का परिष्कार होगा। दिनोंदिन विश्वस्तर पर बढ़ते हुए आपाधापी, आतंकवाद, गरीबी, कुपोषण, बीमारी की समस्याओं पर विश्व स्तर पर ईमानदारी से, स्वस्थचित्त, स्वस्थ मन से विवेचना की जायेगी, जिसमें मानव में सामूहिक हित के संस्कार एवं सहकार की भावना उदित होगी एवं विश्व स्तर पर बढ़ती हुई उच्चशृंखलता, अराजकता, हिंसा, यौनाचार एवं मानव विनाश से मुक्ति मिलेगी।

जैसे किसी संरचना को ध्वंस करने में कम समय लगता है, फिसल कर नीचे गिरने में अल्प समय लगता है परन्तु निर्माण में, सृजन में अवश्य धैर्य धारण करना पड़ता है। जैसे कि आग के पास हाथ या कपड़ा ले जाने पर तुरन्त जल उठता है परन्तु एक आम्र के गुठली से वृक्ष बनाने तक एवं फल प्राप्त करने में कम से कम १५ से २० वर्ष का समय लग जाता है। तदोपरान्त पीढ़ी दर पीढ़ी उसके फल को व्यक्ति प्राप्त करता रहता है। ठीक उसी प्रकार योग से सम्बन्धित कार्यक्रम यदि विश्व स्तर पर ईमानदारी से लागू किया जाय तो निश्चित रूप से विश्व में व्यापक भाईचारा, आपसी सहकार से ''वसुधैव कुटुम्बकम्'' की भावना जागृत होगी। अपने आप मानवों के बीच प्रेम का विकास होगा। साहचर्य बढ़ेगा तथा योग की प्रामाणिकता का मार्ग मानव के अध्यात्मिक विकास से स्वत: प्रशस्त हो जायेगा।

यदि यह सफल प्रयोग भारत की मिट्टी से प्रारम्भ होकर वैश्विक स्तर पर फैलेगी तो निश्चित रूप से हमारे ऋषि-मुनियों, महर्षियों द्वारा प्रदत्त योग का फल पूरे संसार के मानवों को बदल कर रख देगा क्योंकि योग का अर्थ है व्यक्ति के विकारों को समूल विनष्ट करते हुए उनकी छिपी हुई सुन्दरता को बाहर लाना, उनके देवत्व को जागृत करना। जो प्राणायाम, व्यायाम, जप, ध्यान के माध्यम से साधक के शरीर को स्वस्थ रखते हुए जीवन में सुख-शान्ति का सुगन्ध भर देती है। योग से युक्त प्राणी की वाणी ललित होती है। उनसे पारस्परिक स्नेह का वातावरण सृजित किया जाता है एवं उनकी आत्मा पवित्रता से मह मह कर उठती है। यही कला भारतवर्ष में योगियों, गुरुओं द्वारा अपने वंशजों को सिखाया गया है। जिससे हम कह सकते हैं कि योग स्वस्थ, पवित्र, निष्पृह जीवन जीने की वैज्ञानिक विधा है। यह मानव में चेतना जाग्रत करने की अद्भुत प्रक्रिया है जिससे मन को नियंत्रण में रखकर जितेन्द्रिय बनकर शक्ति संचय करने की परम्परा को पुर्नजाग्रत किया जाना एक शुभसंकेत है जिससे वैश्विक स्तर पर शान्ति का वातावरण विकसित होगा। परिणामत: मानवता सही अर्थों में पुष्पित, पल्लवित होकर भारतभूमि के महत्व का सुरभि सुगन्ध वायुमण्डल में फैलेगी। अघोर परम्परा में भी मातृ ऋण, पितृ ऋण, गुरु ऋण के साथ राष्ट्र ऋण से भी उऋण होने का तथ्य बताया जाता है। अघोरेश्वर की कृपा से **''विश्व योग दिवस''** के रूप में **२१ जून** की तिथि राष्ट्र ऋण से उऋण होने का ही अंश है। जिससे विश्व की सात सौ करोड़ जनता आलोकित होगी जो वास्तव में कल्याणकारी कदम होगा एवं अविस्मरणीय ऐतिहासिक क्षण की साक्षी होगी।

C-अघोराचार्य बाबा कीनाराम अघोर शोध एवं सेवा संस्थान् के लिये प्रकाशक एवं मुद्रक **अरुण कुमार सिंह** द्वारा महादेव प्रेस, बी.3/335, रविन्द्रपुरी कॉलोनी, भेलूपुर, वाराणसी (उ0प्र0) से मुद्रित एवं प्रकाशित।

सम्पादक : चन्द्र नाथ ओझा

ग्राफिक्स : आशीष कुमार बरनवाल

☎ **0542-2277155.**
e-mail–kinaram@rediffmail.com
www.aghorpeeth.org

प्रथम पृष्ठ का शेष

क्रिया

पूज्यपाद बड़े सरकार भगवान अवधूत राम जी ने भी कहा है कि ''आलसी मनुष्य पृथ्वी पर भार होते हैं'' यानी वे कार्यशील जीवन को निष्क्रिय कर चौपट कर देते हैं। अपना संस्कृत साहित्य तो ऐसे दृष्टान्तों से भरा पड़ा है जिसमें ''आलस्य ही मनुष्यानां शरीस्थ महान रिपु:'' की उक्ति देकर आलस्य रूपी शत्रु को मनुष्य के लिये सबसे बड़ा घातक कहा गया है। जबकि कार्य करने की लगन एवं अपने क्रियाशीलता से मनुष्य कहाँ से कहाँ पहुँच जाता है, जहाँ क्रिया का व्यापक प्रभाव होता है, वहाँ निराशा, भय, असंतोष अभाव या असफलता का नामोनिशान नहीं होता, बशर्ते कि उसमें समर्पण एवं विश्वास की शक्ति बलवती बनी रहे तथा निरन्तरता का भाव सदैव जाग्रत बना रहे। ऐसे ही स्थिति को और अधिक बल प्रदान करने हुए एवं प्रत्येक व्यक्ति के पास पूँजी का पिटारा होने के रहस्य को रेखांकित करते हुए मूर्धन्य संत कबीरदास जी कहते हैं कि ''सबकी गठरी लाल: जो यह गठरी ना खोले वही बने कंगाल'' दूसरे शब्दों में कवि सम्राट संत तुलसीदास जी ने भी स्पष्ट किया है कि ''सकल पदारथ ऐही जग माहीं, कर्महीन नर पावत नाहिं'' यानी ''वीरा भोग्या वसुन्धरा'' को ही आधुनिक युग के वनस्पति शास्त्र प्रणेता डरबिन महोदय ने ''सरवाइल आफ द फिटेस्ट'' का सिद्धान्त यानी ''श्रमेव जयते'' को सर्वोपरि माना है।

यदि मनुष्य क्रियाशील है तो उसे धोखा, छल, कपट, धूर्तता का सहारा नहीं लेना पड़ता, न तो उसे समाज में या अपने जीवन में असहाय होकर प्रताड़ना ही सहनी पड़ती है जो जिस योग्य अपने को नहीं बना सका, उस पद की प्राप्ति की अभिलाषा ही उसे नर्कगामी या लालची बनाती है, वह चोर, उचक्का, लुटेरा की श्रेणी में आबद्ध होता है, जबकि मेधावी, वकील, व्याख्याता, चिकित्सक, वैज्ञानिक, शिक्षक के यहाँ प्राकृतिक रूप से सहकार, सहायता, ज्ञान, इलाज हेतु जनता जनार्दन भीड़ लगाये रहती है, ऐसे व्यक्ति शोहरत एवं दौलत दोनों से परिपूर्ण होते है, वे समाज के अगुवा, नेतृत्वकर्ता होते हैं। उनके आनन में एक सुखद संतोष की लहरे हिलोरे मारती रहती है, ऐसे ही व्यक्ति जीवन का भरपूर आनन्द उठाते हैं एवं ऐसे ही कर्मठ योद्धा पर सद्गुरु या भगवान की कृपा बनी रहती है, कहने का तात्पर्य यह है कि जो मनुष्य अपने कर्त्तव्य को नहीं भूलता, जैसे प्रतिदिन भोजन अनिवार्य है, उसी प्रकार यदि मनुष्य ईमानदारी से अपने निर्दिष्ट अभीष्ट कार्य लक्ष्य की पूर्ति में प्रतिदिन लगा रहे; तो वह वास्तव में कीनारामी सम्प्रदाय का सदस्य है, उसकी अघोर दर्शन में अटूट आस्था है उसकी वाणी से, शरीर से कर्म का प्रस्फुटन होता रहता है। उसका मुखमण्डल विजेता की भाँति सदैव देदीप्यमान बना रहता है, बशर्ते की क्रिया की आवृत्ति का वह निरन्तर अभ्यासी बना रहे, अन्यथा संस्कृत में श्लोक है कि ''आनाभ्यासे विषं विद्या; अजीर्ण भोजनं विषं, विषम समा दरिद्रस्य, वृद्धस्य तरुणी विषम'' अर्थात् अभ्यास के अभाव में अर्जित विद्या भी विष के समान, अजीर्ण सुभोजन भी विषतुल्य तथा भरी सभा में दरिद्र की उपस्थिति या तरुणी का वृद्ध व्यक्ति का सहगामी बनना सुखदायी नहीं विषतुल्य ही हो जाता है।

ध्यान देने योग्य तथ्य यह भी है कि हमारी क्रियायें सकारात्मक हो, इसके लिए स्वयं कर्ता के पक्ष पर ही सतकर्ता वांछनीय है। संग दोष, स्थिति-परिस्थिति, गलत वातावरण का कुप्रभाव कर्त्ता के मानस पटल पर न पड़े। उसके कार्य की दिशा डांवाडोल न हो। इसका अत्यधिक महत्व है। तस्करी, अनैतिकता से धन कमाना, अमर्यादित, निषिद्ध कार्य करना सर्वधर्म समभाव का ख्याल न करना इत्यादि कृतृत्व इसी श्रेणी की क्रियायें हैं। जिससे व्यक्ति को अपयश, असम्मान एवं आत्महीनता का परिणाम भोगना पड़ता है। प्राचीन कहावत है कि **जो जैसा बोता है, वैसा ही काटता है।** इस प्रकार समय रहते अपने क्रियाओं पर ध्यान न देना तथा कुपरिणाम के पश्चात् कालान्तर में पछताना या पश्चाताप करना **चिड़िया चुग गई खेत** को ही चरितार्थ करेगा। क्योंकि हमारी क्रियायें ही हमारी भाग्य निर्माता हैं एवं कृत कार्य का फल अवश्यंभावी है। किसी विचारक ने कहा है कि **''कलियुग नहीं है करयुग है इस हाथ देई, उस हाथ लेई।''** अत: अपने क्रियाओं पर सतत निगरानी रखना परम अपेक्षित है।

यद्यपि आधुनिक सफल जीवन जीने की राह परमपूज्य अवधूत भगवान राम जी के द्वारा वरदान की भांति अघोरेश्वर के अनुयायियों को प्रदत्त **''सफल योनि''** ग्रन्थ के पाँचवे अध्याय के अन्त में भी बड़े ही सरल शब्दों में सरलतम प्रक्रिया द्वारा दैनिक क्रिया के श्रीगणेश का सूत्रपात किया गया है जिसमें प्रात: बिस्तर छोड़ने के पश्चात् गुरु को ध्यान करने एवं वन्दन करने के बाद अपनी दिनचर्या प्रारम्भ करने का सरल सूत्र अंकित है; जिसके सहज अनुपालन से ही हम न केवल इस युग में सांसारिक संतापों से अपनी रक्षा कर सकते हैं बल्कि एक कुशल प्रशासक की तरह स्वयं को नियंत्रित करते हुए अपनी मानव योनि को भी नि:संदेह सफल बना सकते है।

संघर्ष आवश्यक

आज जन जीवन के सामने अपनी वैयक्तिक कठिनाइयाँ तो है ही साथ ही कुदरत द्वारा भी कुछ विशेष कठिनाइयाँ सामने प्रस्तुत है। जनजीवन को इन कठिनाइयों का धैर्यपूर्वक सामना करना चाहिये। मनुष्य के पास विचाररूपी एक अपना अलग धरातल है, इस धरातल पर बुद्धि की एक अपनी अलग शक्ति है। यह ऐसी शक्ति है जिसके सहारे हम संसार में हर कठिनाइयों का सामना कर सकते हैं। मानव आदिकाल से मानवीय विरोधी प्रवृत्तियों से तो लड़ता ही रहा पर साथ ही उसकी कुदरत से भी कम लड़ाई नहीं हुई है। मनुष्य को अपनी रक्षा के लिये विषम परिस्थितियों से ही नहीं बल्कि कुदरत से भी लड़ना होगा।

संसार में आर्थिक राजनैतिक अनेक परिवर्तन हो रहे हैं। सबको इन परिवर्तनों से हताश नहीं होना है। इन परिवर्तनों में एक दूसरे के साथ हमें संयोजित करना है तभी हमारी सफलता है। अत: सफलता के लिये संघर्ष आवश्यक है। यह संघर्ष हर क्षेत्रों में हो सकता है। संघर्ष सर्वदा बुद्धि और विवेक से हो तो नि:संदेह सफलता सामने होगी।

अवधूत-वाणी

हे कापालिक! मानव शरीर का बहुत बड़ा अर्थ है और तू अच्छी तरह नोट कर ले कि तुम्हें घर बार-बार मिल सकता है, पृथ्वी बार-बार मिल सकती है, मित्र बार-बार मिल सकते हैं और स्त्री भी बार-बार मिल सकती है परन्तु शरीर बार-बार नहीं मिल सकता। अत: तू यह मानव शरीर प्राप्त कर कुछ ऐसे कार्य कर जो तेरे जीवन को स्वच्छ बना सके।

यदि तू खुदा के नजदीक जाना चाहता है तो खुदा के बताये हुए मार्गों पर चल, संसार की भलाई कर। हे प्राणी! तू अच्छी तरह याद रखले कि तुम्हें न तो तुम्हारी दौलत खुदा के नजदीक ला सकती है और न तो तुम्हारी औलाद ही और यदि तू सोचता है कि तुम्हारी औरत, तुम्हारे माता-पिता, सगे-सम्बन्धी तुम्हें खुदा तक ले जायेंगे तो यह तुम्हारा भ्रम है। खुदा के नजदीक तो वही जा सकता है। जो खुदा की बात मान कर मानव मात्र की भलाई करे।

शोक संदेश

संस्था के अघोर भक्त श्री देवप्रकाश सिंह (बंगला सिंह) निवासी ग्राम-भेवार, चाँद, कैमूर (बिहार) की धर्मपत्नी स्व0 सुशीला देवी का शिवलोक गमन दिनांक 01.06.2015 को हो गया है। हम सभी महाराज श्री से प्रार्थना करते हैं कि अघोरेश्वर लोकगामी आत्मा के परिवार जनों को इस दु:खद घड़ी में संयम के साथ सहने की शक्ति प्रदान करें।

इष्ट या ईश्वर सर्वव्यापक हैं

बड़े सरकार यानी परमपूज्य भगवान अवधूत राम जी की अन्तिम वाणी **''रमता है सो कौन, घट-घट में विराजत है, रमता है सो कौन बता दे कोई।''** यानि उस परम अज्ञात सत्ता की सम्पूर्ण जानकारी मनुष्य के मन, बुद्धि से परे की विषय वस्तु है। मानव मस्तिष्क यद्यपि समस्त जीवों के अपेक्षा विकसित है, फिर भी अनन्त सत्ता की उपस्थिति एवं उसका सम्पूर्ण ज्ञान ग्रहण कर लेना मानसिक क्षमता से परे है। इसीलिए सरल ग्रन्थ **''सफल योनि''** में उद्धृत हैं कि परमसत्ता की सम्पूर्ण जानकारी मनुष्य के द्वारा मन, वचन या बुद्धि से नहीं हो सकती। सबसे आसान तथ्य अपने को ही समझना है जो कि परम दु:साध्य है। परमपूज्य अवधूत भगवान राम जी ने कहा है कि मनुष्य का शरीर ही ईश्वर का मंदिर है। तथा मानव की सेवा ही ईश्वर की सेवा है। विश्व में चाहे कोई धर्म, सम्प्रदाय या पथ हो या निराकार, साकार ब्रह्म की उपासना हो या ईसाई, मुस्लिम, यहूदी या अन्य कोई विचारधारा हो सबके अभीष्ट में मानवता एवं प्राणीमात्र का कल्याण ही लक्ष्य होता है। पूजा, अर्चना, इबादत, नमाज, प्रेयर या जो भी पद्धति हो, अहंकाररहित होकर सबमें उसी परम सत्ता की आराधना की जाती है।

दृष्टान्त स्वरूप शब्द ॐ में अल्लाह एवं मोहम्मद भी समाहित है। यदि हम शब्द ॐ को उर्दू या अरबी वर्णमाला के अनुसार जाँचे तो ॐ बनता है, अलीफ, वाव और मीम से। अलीफ से अल्लाह का तात्पर्य है वाव का अर्थ ''एवं'' होता है तथा मीम से मुहम्मद का संकेत है। इसका स्पष्ट अर्थ है कि ॐ में इस्लाम है तथा इस्लाम में ॐ समाहित है। इसी प्रकार हमारे मुस्लिम सम्प्रदाय में मुस्लिम भाईयों द्वारा नमाज अदा किये जाने, हाथ की सफाई यानी वजू करने एवं बैठने की भाव मुद्रा योगासन का ही प्रदर्शन है। जिसका उद्देश्य है मानसिक, शारीरिक स्वास्थ्य को बनाये रखना जिससे प्रत्येक व्यक्ति को आत्मिक विकास का अवसर प्राप्त हो सके। ईश्वर या अल्लाह की प्राप्ति शरीर के स्वस्थ रहे बिना, पुरुषार्थी रहे बिना सम्भव नहीं है। अस्तु, संसार के विभिन्न भागों में मनीषियों, अवतारों, महापुरुषों द्वारा विभिन्न समय एवं काल में स्थिति परिस्थिति के अनुसार मानव को पूजा ध्यान एवं इबादत, प्रेयर करने की पद्धति प्रदान की गयी है। जिससे उसके पाप पंजर का समूल नाश हो। चित्त प्रसन्न हो तथा ज्ञान की उत्पत्ति हो एवं पुरुषार्थ का सृजन हो। जिससे अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष की प्राप्ति अपने-अपने दर्शन के अनुसार हो सके। ऐसे पुरुषार्थी व्यक्तियों पर अघोरेश्वर प्रसन्न होते हैं। व्यक्ति को स्वयं ही इस योग्य बनना होता है कि वह प्रकृति यानी परमसत्ता द्वारा प्रदत्त शक्ति का भरपूर सदुपयोग कर सके। तभी कहा गया है कि **''ज्यो तिलमे तेल है ज्यो चकमक में आगि, तेरा साई तुझीमे जाग सके तो जाग।''** यानी स्वयं को उत्प्रेरित कर ऐसी स्थिति में लाना जिससे परमसत्ता के स्वाद का स्वात्विक निर्विकार एवं आनन्दमय कोष का रसपान स्वयं किया जा सके। इसके लिये स्वयं को परत दर परत अपने ऊपर पड़े विकारों के चादर को हटाना पड़ेगा। जो कि निरन्तर प्रयास एवं ईमानदार साधना से सुलभ है। इस स्थिति को प्राप्त किये जाने में ग्रन्थों का अध्ययन कर लेना या विद्वान कहे जाने मात्र से नहीं होता है। जिसके दृष्टान्त स्वरूप समय-समय पर हमारे बीच अवतार रूप में उपस्थित रहे बाबा कीनाराम, संत रविदास, मीराबाई, दादू, संत नाभा, गुरुनानक, कबीरदास, सूरदास आदि समर्थ महात्मा एवं समाज सुधारक रहे हैं, जिन्होंने जीवन में प्रेम के पथ को ही सर्वमान्य, सर्वसुलभ रास्ता बताया है, जिससे परमसत्ता यानी ईश्वर की अनुभूतियों का रसास्वादन कर सकते हैं।

पृष्ठ चार का शेष

हम, हमारा का त्याग करें

मण्डल ब्राह्मण लोगों की बस्ती थी उसमें आग लग गया। आग लग गया तो ब्राह्मण लोग चिल्ला कर कहे कि आग लगा और हम जले सो भागे रोड में आ गये। जब रोड में आ गये तो फिर कहने लगे जैसे आप लोग कहते हैं अरे हमारा सब जला, सब जला, जला। फिर वहाँ पहुँचे। सन्दूक जला, पेटी जला, भाई जला फिर जब वहाँ पहुँचे तो वह लाफ मारा उधर से ज्वाला का तो फिर कहते हैं हम जले, जले। फिर भागते हैं। इसी तरह हमारे सबके जीवन में आग लगा हुआ है। हम जले और उसके बाद भागते है तो हमारे जला फिर वहाँ पहुँच जाते हैं। सब कुछ कहने के बाद फिर वहाँ पहुँच जाते हैं।

यही मैं आप लोगों को देख रहा था। अपने उसी पीड़ा को चिल्ला रहे हैं। मगर फिर चिल्ला करके, घूम करके वही पहुँच जाते हैं जहाँ हमार जला। हम जले तो भागते हैं और हमारा जला तो फिर वहीं पहुँच जाते हैं। इस तरह का हमारे लोगों की स्थिति है। कहाँ दु:ख का समूल नाश हो पाता है? हम प्रयत्न नहीं कर पाते हैं। जब संतप्त होते हैं तो उसी सहस्र भुजा, सहस्र सहस्र पांव वाली डाकिनी की दशा है। वह नाचती है, नृत्य करती है, ब्रह्माण्ड में डाकिनी की तरह। अपने परेशानियाँ बेचैनियों से क्षोभित हो जाते हैं। इतने क्षोभित हो जाते हैं कि नींद नहीं आती है बिस्तर नहीं अच्छा लगता है। प्रियजन भी अच्छे नहीं लगते हैं। कोई कुछ बात करता है तो अच्छा नहीं लगता है। जिस खाना को हम हलुवा बनवाये थे वह सतु की तरह भी नहीं लगता है। जिस रोटी को हमने घीव घसवाये थे, वह सूखी रोटी की भी तरह नहीं लगता है, का जाने उसका स्वाद बदल जाता है? आप अपने दु:ख के समय में, परेशानियों के समय में, घर में रोटी खाते समय, आप पाये होंगे कि वह रोटी का, जिसमें खूब मिर्चा, मसाला दिये थे उसका भी स्वाद बदल जाता है, रुचिकर नहीं होता है, दु:ख ऐसी है।

इन सब दु:खों का समूल नाश कैसे हो? हम पूरे देश भर की चर्चा नहीं करने जाते। हम व्यक्तिगत उस केदली वन के पास पहुँचे हैं। उसकी छाया में पहुँचे हैं तो इतना तो जरूर मैं निश्चय करूँगा कि अब हमारे जीवन में इस तरह का जो दु:ख है, इस तरह की जो उलझने है, कुछ मात्रा में तो कम हों। कहीं निश्चिन्त तो बैठकर थोड़ा समाधिस्थ तो होवें। फिर अपनी इन्द्रियों का निरीक्षण तो करूँ। और इन सब बातों को तो सोचूँ। इसके लिये कोई अधिक प्रयत्न नहीं करना है, ज्यादा प्रयत्न नहीं करना है बहुत थोड़ा भी यत्न है और अधिक भी यत्न है।

जब तक आपके मन में मस्तिष्क में बनता रहेगा कि हम हमारा जला। जहाँ तक हमारा है, सुने होंगे। लक्षण ने राम से पूछा था, वह दु:ख क्या है? राम ने कहा हैं—

मैं अरु मोर तोर ते माया।
जेहि बस कीन्हें जीव निकया।।

अपरिचित अतिथि के रूप में ही भगवान मिलेंगे

अघोरेश्वर महाप्रभु बाबा भगवान रामजी का आशीर्वचन

धर्मबन्धुओं!

अपना सब कुछ कहने के पहले हम एक बात और कह देना चाहते हैं कि यदि आप वशीकरण मंत्र सीखना चाहते हैं तो उसके लिये ज्यादा जप करने की जरूरत नहीं पड़ती। बस तजि दे वचन कठोर। आप कठोर वचन परित्याग कर दीजियेगा तो पशु पक्षी भी आपके साथ, आपके नजदीक आने लगेंगे और सब बात कहने के पहले एक बात और अपना कह देता हूँ। अतिथि सत्कार के ही बारे में है। एक सज्जन यहाँ है, उसी बस्ती के। वह जानते हैं। मेरे साधु बनने की प्रेरणा एक मनयोगा नाम की वयोवृद्ध ब्राह्मणी से हुई। जिनको कोई नहीं था। ससुरा से नैहर बराबर आया जाया करती थी। दिन भर में दो बार उनके नजदीक ही पड़ता था। कोई नहीं था उनको। मैं बड़े छोटे अवस्था से सेवा किया हूँ बराबर उनका डण्डा पकड़ कर ले जाता, ले आता था। अपने घर से उनको ले जाकर कुछ देता भी था। उनको पकड़ लेते थे तो वो हमको बड़ा आशीर्वाद देती थीं- बेटा तुम अमुक हो जाओ, अमुक हो जाओ तो मैं सोचता हूँ कि उन्हीं का आशीर्वाद है, उन्हीं की प्रेरणा है कि इस रूप में इस जमीन पर हूँ। तीर्थों में संतों, महात्माओं और सज्जनों का साथ होता है, सुमित्रों का साथ होता है।

मैं अतिथि होकर भी कितने लोगों के घर गया हूँ। दुतकारा भी गया हूँ और श्रद्धा का पात्र भी बना हूँ। बहुत लोगों ने अपनी श्रद्धा पी दिया है और बहुत लोगों ने दुतकारा भी है। तो जो कुछ वो देते रहे हैं, उसको हम लेते ही थे। हमारे जो समझ में आता था हमारे लिये जो उचित होता था, ओ सब ले लेते थे और बहुत सी उनकी बातें थी, बहुत से अनेक विचार थे, वे देना चाहते थे, उसको मैं नहीं लेता था। उसको मैं लेकर क्या करता? उसको मैं छोड़ देता। उसके पास वह रहता या कहीं चला जाता मैं नहीं जानता। तो अतिथि हमारे विचार से वो अपरिचित लोग ही हैं। अतिथि के रूप में जो भगवान मिलेगा, वह अपरिचितों के रूप में ही मिलेगा। उसका परिचय पाना मुश्किल है। जिस चेहरे से, जिस शरीर से आप परिचित हैं। उसके वाणियों में भगवान के रूपों का आप समागम कर सकते हैं। उसके शरीर से उसके देह से आप नहीं कर सकते। जैसे आप अपने ध्यान के मार्ग से या अपने भीतर के प्रेरणा से अपने इष्ट देवता हर मन्दिरों पर हर एक देवी के विग्रहों के पास पहुँच जाते हैं। जब आप ध्यान करने बैठते हैं तो नेपाल की गुहेश्वरी, कालीमठ की कालिका, विन्ध्याचल की भगवती बंगाल की दक्षिणेश्वरी, आप उनके पास कितना जल्दी पहुँचते हैं। सिर्फ आप अपने उसी मन के विचार के द्वारा जाकर उनके आशीर्वाद भी ले लेते हैं कि भगवती प्रसन्न है, मुझे माला भी पहना रही हैं, मेरे मस्तक चूम रही है। मेरे हृदय चूम रही है, मेरे को बड़ा प्यार कर रही हैं। हम देखते हैं कि पाँच मिनट में इस तरह के ध्यान का यह क्रिया समाप्त करते हैं।

इसी तरह से हम भी कहीं दीन हीन अवस्था में भटके हुए अवस्था में पहुँचता हूँ। सज्जन है कि दुर्जन है यह हमको पता नहीं लगता है। अकस्मात पहुँच जाता हूँ। इसका तो तभी पता लग पाता है जब उनके प्यार की वाणियों, उनका प्यार, उनकी खुशियाँ नाच उठती हैं। तभी सोचता हूँ कि यह ईश्वर भक्त है, ईश्वर अनुरागी है, इनको ईश्वर में विश्वास है। अतिथि के रूप में भगवान को देखते हैं और यह प्राय: इनकी प्रतीक्षा में घर पर शाम को रहते हैं। शबरी की तरह उसको तो पता भी मालूम था। फलाने हैं। ऐसे हैं वो दो तीन के साथ आयेंगे। और जो इस तरह की प्रतीक्षा में रहता हो, वह व्यक्ति को, उस विराट ईश्वर के अतिथि के रूप में सेवा करने का यह बड़ा सौभाग्य ही रहता है।

तो हम कहूँगा कि आप जिसको जानते हैं जिसको चिन्हते है वो तो मेहमान भी हो सकते हैं। जो सूचना देकर आते जाते हैं वे तो पेटी, बक्सा सन्दूक लादे फिरते हैं।

जिसको अतिथि कहा गया है जिसमें हमको ईश्वर का दर्शन होता है, जिसको हम कुछ देकर बड़ा खुश होते हैं। इतना प्रसन्नता अपने हृदय में होता है। आप ही हैं किसी को जब कुछ चीज दे देते होंगे तो कितनी खुशियाँ होती होगी। हृदय में। उसकी उस प्रसन्नता का मूल्यांकन नहीं किया जा सकता। जब किसी का कोई चीच ले लिये धोखाधाड़ी देकर तब आप अपने मन को टटोलिये। एक तो पहले नेत्रों में? बनियों के नेत्रों में तो लज्जा नहीं आती। बनियों की बात नहीं कहता हूँ। क्योंकि वह मनुष्य नहीं है। इसलिये उनको मानवता का जहाँ तक सवाल है, वहाँ तक उनका स्थान नहीं हैं क्योंकि हमारे यहाँ का एक रिक्शा चलाने वाला एक गाँव में का चमार कहता है कि यह सूदखोर है, यह नफाखोर है। रिक्शा चलाने वाला? माने वह कितना स्वाभिमानी है? हमारे भारत का एक रिक्शा चलाने वाला व्यक्ति भी उसको हेय दृष्टि से देखता है। उसको इस बात का शर्म नहीं है। उसकी बात मैं नहीं करता।

पर आप किसी से भी ऐसी चीजें धोखाधड़ी दे कर ले लेते हैं या किसी का उठा लेते हैं तो आप देखिये सारा बदन, उस समय का सारा शरीर एक बड़ा हेय सा हो जाता है। मालूम होता है कि इससे बढ़कर कोई नरक नहीं हो सकता। पर जब किसी को गुड़ या एक गिलास पानी या कुछ नहीं तो बहुत से लोग तो सुर्ती पटक कर जरा देते हैं तो उसका मन पर कितना बड़ा प्रभाव पड़ता है। और सोचिये अपनी परिश्रम की वस्तु देने में आपके हृदय पर कितना प्रभाव पड़ेगा। कितना आप अपने को अतौल समझेंगे? जिसको तौला नहीं जा सकता तो हम यही कहूँगा जो अपने हमारे सम्पर्क में आने वाले हैं, आप अपने को अतौल समझें। कहीं तोले नहीं जा सकें, औरों की तरह।

यदि आप समाज विरोधी कार्य करके कुछ ले लेते हैं तो नेत्रों में लज्जा लगता है। कभी बैठते हैं, कोई पूछता है तो पीठ खजुलाने लगता है, कपार खजुलाने लगता है। इसी से पुलिस चोर को समझता है। एक बार निगाह इधर को डाला तो लगेगा कपार खजुलाने लगेगा नीचे ऊपर देखने तो वह समझेगा कि यह बदमाश है, शरारती है। इतने ही से वह पकड़ लेता है और यह प्रवृत्ति उसमें हो जाती है।

तो हमारा अतिथि सत्कार इसीलिये है कि किसी का कुछ लेने के बजाय हम कुछ दें। हमारे पास कुछ नहीं तो वाणी तो है। वशीकरण एक मंत्र है तजि दे वचन कठोर। प्रिय वाणी से तो हम उसका सत्कार कर सकते हैं, उसके हृदय को टटोल सकते हैं। उसके मस्तिष्क में एक स्व आनन्द भरी सकते हैं। वह जहाँ भी जायेगा उछलता हुआ जायेगा कूदता हुआ जायेगा। वह व्यक्ति समझेगा कि मैं सत्संग करके आया हूँ। जिसको तुले या न तालै ताहि सकल मिली, कहा गया है। अतुल्य उसके दिमाग में बुझायेगा। वह अपने को एक मूल्यवान समझने लगेगा और जिसका वह संग करके गया है, जिन्होंने अपने वाणियों द्वारा अपने गुणों द्वारा या अपनी व्यवस्थाओं के द्वारा सहयोग कर दिया उनके हृदय की तो प्रसन्नता और खुशियाँ तो उनके हृदय में ही हैं। उसको हम कह भी नहीं सकते आपसे। आप खुद भी थोड़ा-थोड़ा करके इन अपरिचितों को देखे होंगे। अनुभव किये होंगे।

हम, हमारा का त्याग करें

धर्मबन्धुओं!

दैहिक, दैविक, भौतिक दु:खों का शमन कैसे हो? (उसका विभिन्न तरह से लोग अपना-अपना व्याख्या किये।) यह दु:ख इस सृष्टि जब तक अपनी दृष्टि खुला रहेगा तब तक यह होता ही रहेगा। जिस दिन अपनी गलती दृष्टि बन्द हो जायेगी, उस दिन अपने पास से व्यक्तिगत तो चला ही जायेगा। भले दूसरे की दृष्टि में रहेगा क्योंकि उसकी दृष्टि में अनेक सृष्टि है अनेक बाते हैं, दु:ख, महा हजारों कोटि दु:ख है। सहस्त्रों कोटि दु:ख है। करोड़ों, करोड़ों दु:ख है। जिस दु:ख से हम लोग संतप्त रहते हैं, उठना, बैठना, सोना, रोना, वार्तालाप यह सब दु:ख ही दु:ख है। स्तुति, प्रार्थना, चिन्तन, मनन यह सब दु:ख ही में है। इन सबका समूल नाश कैसे होगा, हम भूने बीज के सदृश कैसे होंगे? फिर इस पृथ्वी पर किसी भी योनि में मेरा जन्म न हो, मैं सदैव के लिये निर्वाण प्राप्त करूँ, इस तरह की भावना उत्पन्न करने के निमित्त ही आज हमने आप लोगों के समक्ष प्रेरणा किये थे कि आप घर, कुटुम्ब, परिवार में रहते हैं। बहुत सी आपकी बन्धने हैं और उससे बहुत ही दु:ख होता है।

जब दु:ख होता है संतप्त होते हैं तो आप चिल्लाते हैं, भागते हैं, दौड़ते हैं। दु:ख रूपी एक डाकिनी है जिसकी सहस्त्रों, सहस्त्रों भुजाये, सहस्त्रों नेत्र हैं, सहस्त्रों पांव हैं और उनसे नृत्य करती है, इस ब्रह्माण्ड में। नृत्य करते-करते जब वह थक जाती है और जब कभी केदली बन में जाती है संत जनों को, संतों का बन है केदली वन तो थोड़ा शान्ति, विश्राम मिलता है। जब विश्राम मिलता है, शान्ति मिलती है तो वह इतना उच्छृंखला ही है कि वहाँ भी नहीं ठहर पाती फिर आती है उस दु:ख की तरफ। आप जानते हैं कि एक दृष्टान्त। एक ब्रह्म

शेष पृष्ठ तीन पर

अघोर सूत्र

☞ **धन की क्रयशक्ति से संसार के सभी रत्नों के पाने का जो आनन्द होता है, ब्रह्मचर्य के साथ एकान्तवास की शक्ति से प्राप्त आनन्द उससे कहीं अधिक होता है।**

अघोरेश्वर महाप्रभु बाबा भगवान रामजी